आव्रजन तथा सामाजिक गतिशीलता की बाधायें

डॉ. चन्द्रकांति देवी*

प्रस्तुत शोध प्रारूप में आव्रजन और सामाजिक गतिशीलता का अध्ययन विकास और परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में दिखलाया गया है, जो नगरीय समाजशास्त्र की उंचाइयों को छूने का प्रयास करता है। समसामयिक और स्थानीय विकृत मनोभाव से उत्पन्न चिंतन आव्रजन और सामाजिक गतिशीलता के मार्ग में चुनौती के रूप में उभर रहे हैं। यह संकेत पूर्ववर्ती शोध अध्ययन तथा व्यक्तिगत अध्ययन से प्राप्त होता है।

एम.एस.गोरे (1968) द्वारा प्रस्तुत बम्बई वी.एस. डीसूजा (1968), चण्डीगढ़, एन.के.बोस (1964) कलकत्ता, एच.सी. मालकानी (1957) का बड़ौदा, एम.मोहिसिन (1964) का चितरंजन, ए. बोपेगामागे (1957) का दिल्ली, डेनियल लर्नर (1957) तथा एस.एन. सेन (1960) का कानपुर का अध्ययन, फीलिप एम. हाउजर (1956) तथा वी.आर.मिश्रा (1959) का जमशेदपुर के अध्ययनों से यह प्रमाणित होता है कि आव्रजकों की स्थानीय दशाओं में अभियोजनात्मकता का स्वरूप सीमान्तता की ओर बढ़ रहा है। मर्टन (1957) द्वारा प्रस्तुत संदर्भ समूह में नकारात्मक संदर्भ समूह की भावना में वृद्धि देखने को मिलती है। ऐसी स्थिति से अलगाव, बिखराव, संरचनात्मक अस्थिरता का पैदा होना स्वाभाविक है। यह अस्थिरता भारतीय अखण्डता के लिये खतरा और एक चुनौती बन सकती है।

इसके अतिरिक्त शर्मा (1998) ने भारतीय सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत आव्रजन और सामाजिक स्तरीकरण की सीमा में कुछ परम्परागत अवधारणाओं के साथ ही साथ नयी विकासवादी मान्यताओं को विकसित किया है, जिसमें जातीय संरचना के साथ–साथ वर्ग व्यवस्था को भारतीय स्तरीकरण का प्रमुख आधार माना है, किन्तु आज वर्तमान परिवेश में शिक्षा के प्रति चेतना, कमजोर वर्गों के स्थिति में तद्जनित परिवर्तन आदि की दशाएं सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा

***समाजशास्त्र विभाग वी.आर.एस.वाई. कॉलेज, कन्हौली (पटना)**

दे रही है, ऐसी स्थिति में यह कहना कि आज खुली समाज व्यवस्था के स्वरूप ने पश्चिमी संस्कृतियों के आधारभूत कारकों को आत्मसात् करते हुए नयी सांस्कृतिक चेतना को भारतीय विकास के नव–सृजित पैमाने पर रखना तथा उसे प्रयोग विधि में लाना ही वास्तविक सामाजिक गतिशीलता है।

आव्रजन और सामाजिक गतिशीलता के मार्ग में जो सम्भावित अवरोध देखने को मिल रहे हैं उनका भी अध्ययन कर लेना शोध की विषय वस्तु को सार्थक बनाना होगा। सम्भावित कठिनाइयां निम्न हैं–

1. प्रदेशवाद और क्षेत्रवाद के संकीर्ण मनोभाव।
2. भाषायी विषमता का पैदा होना।
3. धार्मिक विभेद की स्थिति।
4. सांस्कृतिक एवं परम्परागत भिन्नताओं की भावना।
5. संयुक्त परिवार तथा जातीय मतभेद से सम्बन्धित धारणाएं
6. ग्रामीण जनजीवन से स्वयं का स्थानीय अप्रतिम लगाव।

आव्रजन एवं सामाजिक गतिशीलता के मार्ग में तमाम अवरोधों का उठना परिस्थितियों की देन है। वैज्ञानिक विकास की अवधारणा ने नयी तकनीकी के प्रयोग से विकसित औद्योगीकरण की उपलब्धियों के साथ मानव के भौतिक जीवन को समोन्नत बनाने में विशेष प्रकार्यात्मक सिद्ध हुआ है। वैज्ञानिक विकास के माध्यम से ही नगरीय समुदाय के अन्तर्गत यातायात एवं संचार के साधन, व्यक्तिगत सम्पर्क, विनिमय का वैचारिक स्वरूप, वस्तुओं का व्यावहारिक आदान–प्रदान तथा भौतिकता में वृद्धि की लालच, व्यक्तिवादिता आदि जैसी चिंतन की प्रमुखता ने व्यक्ति को सामाजिक गतिशीलता के लिये उत्साहित किया। इसके साथ ही साथ तकनीकी एवं प्राविधिक साधनों का अधिकाधिक प्रयोग मानव को आव्रजन एवं प्रवजन की सक्रियता में बांध दिया। वे स्थान जहां कच्चे माल की सुलभता, खनिज पदार्थों का आधिक्य तथा औद्योगिक प्रसारवाद में विभिन्न प्रदेशों के श्रमिकों के सामने उद्योग–धन्धों की पकड़ एवं कल–कारखानों की स्थापना के माध्यम से देश–प्रदेश की सीमा को गतिशील बनाया और आव्रजन तथा प्रवजन की यथार्थता को भी सिद्ध किया।

श्रीनिवास (1968) का मानना है कि विगत् 150 वर्षों के ब्रिटिश शासनकाल में औद्योगिक नगरों का विकास प्रशासनिक एवं गैर प्रशासनिक सेवाओं के अवसर

तथा नगर क्षेत्रों में विविध कार्यालयों एवं प्रतिष्ठानों की स्थापना ने व्यक्ति को आर्थिक विकास के अवसर के साथ ही साथ आव्रजन एवं प्रवजन के लिये उत्साहित किया। ब्रिटिश शासन व्यवस्था, अवसर की समानता और भारत के समृद्धि के साथ शासन व्यवस्था का जो स्वरूप निर्धारित किया था, वह वास्तव में गतिशीलीकरण का परिचायक था। उदाहरण के लिये विभिन्न प्रांतों में अवस्थित नगरों–रानीगंज, झरिया, बोकारो, सिंहभूम, धनबाद और सिंगरौली आदि जंगली क्षेत्रों में विभिन्न खानों के उद्‌भव और विकास ने आव्रजन और प्रवजन को आकृष्ट किया। इसी प्रकार भिलाई, राउरकेला, दुर्गापुर जैसे लौह उद्योगों की स्थापना ने नगरों के विकास तथा सामाजिक गतिशीलता को प्रोत्साहित किया। नगरों का विकास बहुआयामी होता है इसलिये उन स्थानों पर सांस्कृतिक सम्पर्क की भाषा विकसित होती है। यही सम्पक सामाजिक गतिशीलता का परिचायक है। आव्रजन और प्रवजन भी सामाजिक गतिशीलता का एक सार्थक एवं सहयोगी कारक के रूप में समाजशास्त्रीय अवधारणा के साथ मेल खाता है। इस दृष्टि से चिकित्सा, मनोरंजन, स्वास्थ्य और शिक्षा, शहरी जीवन की अभिवृति तथा औद्योगिक प्रतिष्ठानों में सरकारी तथा अर्द्धसरकारी नौकरियों की संलग्नता ने आव्रजन और प्रवजन को विविध रूपों में उत्तरोत्तर प्रोत्साहन दिया है। बोधगया नगर की परिस्थितिकीय संरचना में सांस्कृतिक, व्यावसायिक, प्रशासकीय तथा उच्च शिक्षा से जुड़ी अवधारणाओं ने बोधगया को विश्व स्तर पर उठाया है तथा इसे धर्म विषयक नगर के साथ ही आर्थिक विकास के बहुवैषम्य नगर से भी अलंकृत किया है।

संदर्भ सूची :

1 M.S. Gore, Emigrants land Neighbourhood- Two Aspects of life in a Metropolitan City, Tata Institute of Social Sciences, Bombay 1968.

2 V.S.D'Souza, Social structure of Planned City, Chandigarh, Orient Longmans Ltd., 1968

3 N.K. Bose, Calcutta- A Social Survey, Lalwani Publishing House, Bombay, 1964

4. H.C. Malkani, Baroda, A Socio-Economic Survey, M.S. University of Baroda, 1957

5. M.Mohsin, Chittranjan - A Study of Urban Sociology, Popular Prakashan, Bombay, 1964

6. A. Bopegamage, Delhi - A Study of Urban Sociology, University Publications, Social Series No.7, 1957

7. Daniel Lerner, Communication system and social systems: A Statistical Exploration in History and Policy, Behavioral Sciences, vol.2, No.4, 1957